IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

"सामाजिक सक्रियता और सामुदायिक लामबंदी: मधेसी आंदोलन और भारत–नेपाल सामाजिक संबंधो पर उनका प्रभाव"

[1]भव्या राय
शोधार्थी
बुद्ध विद्यापीठ पीजी कॉलेज
राजनीति विज्ञान विभाग
(सिद्धार्थ विश्वविद्यालय कपिलवस्तु)
सिद्धार्थनगर

[2] डॉ. शक्ति जायसवाल
असिस्टेंट प्रोफेसर
बुद्ध विद्यापीठ पीजी कॉलेज
राजनीति विज्ञान विभाग
(सिद्धार्थ विश्वविद्यालय कपिलवस्तु)
सिद्धार्थनगर

सार: यह शोध पत्र नेपाल में मधेसी आंदोलनों के सामाजिक सक्रियता और सामुदायिक लामबंदी के एक शक्तिशाली रूप के रूप में विकास की खोज करता है। यह आलोचनात्मक रूप से जांच करता है कि ऐतिहासिक बहिष्कार, पहचान–आधारित हाशिए पर और राज्य की उपेक्षा ने तराई क्षेत्र के मधेसी समुदाय को निरंतर राजनीतिक कार्रवाई के लिए कैसे प्रेरित किया, खासकर 2007, 2008 और 2015–16 के प्रमुख आंदोलनों के दौरान। अध्ययन जमीनी स्तर के नेतृत्व, डिजिटल सक्रियता, प्रतीकात्मक विरोध और भारतीय और अंतर्राष्ट्रीय हितधारकों के साथ गठबंधन सहित लामबंदी के साधनों का विश्लेषण करता है। यह घरेलू सक्रियता और सीमा पार की गतिशीलता के बीच जटिल अंतर्संबंध को उजागर करता है, मधेसियों और भारतीय समुदायों के बीच गहरे सांस्कृतिक, भाषाई और पारिवारिक संबंधों पर जोर देता है। यह पत्र भारत के सूक्ष्म नीतिगत रुख का मूल्यांकन करता है – सांस्कृतिक एकजुटता के साथ कूटनीतिक सावधानी को संतुलित करना और इन आंदोलनों ने भारत–नेपाल द्विपक्षीय संबंधों को कैसे प्रभावित किया, खासकर 2015 की नाकाबंदी के दौरान। विदेशी हस्तक्षेप, नेतृत्व विखंडन और अंतर–समुदाय बहिष्कार से संबंधित आलोचनाओं पर चर्चा की गई है, साथ ही नेपाल के संघीय ढांचे के भीतर मधेसी मांगों को बनाए रखने की चुनौतियों पर भी चर्चा की गई है। अध्ययन समावेशी शासन, क्षेत्रीय सहयोग और समुदाय–संचालित कूटनीति के लिए भविष्य–उन्मुख सिफारिशों के साथ समाप्त होता है, जो सुझाव देता है कि दीर्घकालिक शांति सहानुभूति और समानता के साथ पहचान और कूटनीति को आगे बढ़ाने में निहित है।

मुख्य शब्द: मधेसी आंदोलन, सामाजिक सक्रियता, भारत–नेपाल संबंध, सामुदायिक लामबंदी, पहचान और बहिष्कार, अंतरराष्ट्रीय एकजुटता आदि।

परिचय

भारत और नेपाल के बीच सदियों पुराना रिश्ता है जो कूटनीतिक संधियों और औपचारिक राजनीतिक संवाद से परे है। खुली सीमाओं, सांस्कृतिक आत्मीयता, भाषाई संबंधों और साझा धार्मिक और ऐतिहासिक विरासत से बंधे दोनों देशों ने लोगों के बीच अद्वितीय संबंध बनाए हैं, खासकर तराई क्षेत्र में। भारतीय राज्यों बिहार और उत्तर प्रदेश और नेपाल के मधेस क्षेत्र के बीच सामाजिक और सांस्कृतिक पारगम्यता बहुत गहरी है, जो रिश्तेदारी संबंधों, सीमा पार प्रवास, व्यापार और राजनीतिक आदान–प्रदान में प्रकट होती है[1]। हालाँकि, इस गहरी अंतर्निहित सामाजिक–सांस्कृतिक परस्पर निर्भरता ने तनाव के दौर भी देखे हैं, खासकर नेपाल में मधेसी आंदोलनों के आलोक में।

नेपाल के दक्षिणी मैदानों (तराई या मधेस) में मुख्य रूप से बसे मधेसी समुदाय की आबादी काफी है। राजनीतिक, आर्थिक और प्रशासनिक संरचनाओं में ऐतिहासिक रूप से हाशिए पर रहने वाले मधेसियों को अक्सर प्रतिनिधित्व, मान्यता और पहचान के मुद्दों से जूझना पड़ता है। भारत के साथ उनकी सांस्कृतिक निकटता, जिसमें साझा भाषाएँ (जैसे मैथिली, भोजपुरी और हिंदी), जातिगत संबद्धताएँ और वैवाहिक संबंध शामिल हैं, उन्हें नेपाल के प्रमुख पहाड़ी समुदायों से अलग करती हैं। इस अंतर के कारण लंबे समय तक बहिष्कार की स्थिति बनी रही और मधेसी आंदोलनों के रूप में सामाजिक–राजनीतिक लामबंदी को बढ़ावा मिला[2]।

मधेसी आंदोलनों–विशेष रूप से 2007, 2008 और 2015 में हुए प्रमुख विद्रोहों ने संघीय पुनर्गठन, आनुपातिक प्रतिनिधित्व और संवैधानिक समावेशन की लगातार मांग को उजागर किया है। इन आंदोलनों ने न केवल नेपाल के भीतर आंतरिक शक्ति गतिशीलता को बदल दिया है, बल्कि भारत–नेपाल सामाजिक संबंधों पर भी महत्वपूर्ण प्रभाव डाला है। मधेसी मुद्दे में भारत की कथित भागीदारी या सहानुभूति ने एकजुटता और संदेह दोनों को जन्म दिया है, जिसने सीमा के दोनों ओर राजनयिक और सार्वजनिक राय को प्रभावित किया है।

यह शोध मधेसी आंदोलनों के सामाजिक सक्रियता और सामुदायिक लामबंदी के रूप में विकसित होने वाले प्रक्षेपवक्र और भारत और नेपाल के बीच सीमा पार सामाजिक ताने–बाने और द्विपक्षीय संबंधों पर उनके प्रभाव का पता लगाने का प्रयास करता है।

मधेसी आंदोलनों का ऐतिहासिक विकास

मधेसी आंदोलनों का इतिहास नेपाल के व्यापक राजनीतिक विकास के साथ गहराई से जुड़ा हुआ है, खासकर राजशाही के बाद के दौर में। मधेसी पहचान की जड़ें तराई के मैदानों में रहने वाले लोगों की सामाजिक–सांस्कृतिक विशिष्टता में देखी जा सकती हैं। 1950 के दशक से पहले भी, मधेसियों को पहाड़ी इलाकों में रहने वाले पहाड़ी लोगों की तुलना में बिहार और उत्तर प्रदेश में भारतीय समुदायों के सांस्कृतिक रूप से अधिक करीब माना जाता था। हालाँकि, इस भेद के कारण उन्हें मुख्यधारा की नेपाली राजनीति से व्यवस्थित रूप से बाहर रखा गया, जिस पर ऐतिहासिक रूप से पहाड़ी–आधारित अभिजात वर्ग का वर्चस्व था। पंचायत युग (1960–1990) के दौरान, जो पूर्ण राजशाही और केंद्रीकरण की अवधि थी, मधेसियों को बाहरी लोगों के रूप में माना जाता था और अक्सर भेदभावपूर्ण नीतियों के माध्यम से नेपाली नागरिकता साबित करने की आवश्यकता होती थी, जो उन्हें पीढ़ियों से निवास करने के बावजूद "विदेशी" के रूप में लेबल करती थी[3]।

राजनीतिक बहिष्कार संवैधानिक राजतंत्र और लोकतांत्रिक काल में भी जारी रहा, जहाँ अपने संख्यात्मक महत्व के बावजूद, मधेशियों को राष्ट्रीय राजनीति, सिविल सेवाओं, सेना और नौकरशाही में कम प्रतिनिधित्व मिला। बहिष्कार न केवल संस्थागत था, बल्कि सामाजिक भी था, क्योंकि मधेशियों

को नेपाली पहचान के राष्ट्रीय आख्यानों में हाशिए पर रखा गया था, जिसमें पहाड़ी संस्कृति, भाषा (नेपाली) और धर्म पर जोर दिया गया था। भेदभाव की इन परतों ने एक संरचित प्रतिरोध आंदोलन के बीज बोए, जिसकी परिणति मधेशी विद्रोह की कई लहरों में हुई।

2007 में पहला मधेश आंदोलन पीपुल्स मूवमेंट II के बाद अंतरिम संविधान की घोषणा के बाद भड़क उठा, जिसके कारण राजशाही का उन्मूलन हुआ। अंतरिम संवैधानिक ढांचे में मधेशियों की मांगों के बहिष्कार के कारण मधेशी जनाधिकार फोरम (MJF) जैसे समूहों द्वारा व्यापक विरोध प्रदर्शन हुए। केंद्रीय मांगों में संघवाद, आनुपातिक प्रतिनिधित्व और मधेशी पहचान की मान्यता शामिल थी। इस आंदोलन में सुरक्षा बलों के साथ हिंसक टकराव और महत्वपूर्ण जानमाल की हानि देखी गई, जिसने अंततः राज्य को संशोधन करने और समावेशन के लिए प्रतिबद्ध होने के लिए मजबूर किया।

2008 में दूसरा मधेसी आंदोलन, हालांकि कम हिंसक था, लेकिन राजनीतिक रूप से रणनीतिक था। यह पहले संविधान सभा चुनावों के साथ समयबद्ध था और सरकार द्वारा की गई पिछली प्रतिबद्धताओं के कार्यान्वयन पर जोर दिया गया था। मधेसी दलों ने विधानसभा में राजनीतिक गति और प्रतिनिधित्व प्राप्त किया[4]। हालांकि, मधेसी दलों के बीच आंतरिक विखंडन ने उनकी सामूहिक सौदेबाजी की शक्ति को कमजोर कर दिया, जिससे उनके लक्ष्यों की आंशिक प्राप्ति हुई।

तीसरा मधेसी आंदोलन (2015–16) क्षेत्रीय भू–राजनीति के संदर्भ में सबसे प्रभावशाली था। यह 2015 के संविधान के प्रचार के जवाब में उभरा, जिसे मधेसी समूहों ने आनुपातिक संघीय सीमाओं, नागरिकता अधिकारों और प्रतिनिधित्व के लिए उनकी मांगों को नजरअंदाज कर दिया। इसके बाद बड़े पैमाने पर विरोध प्रदर्शन, सीमा नाकाबंदी और झड़पें हुईं। नेपाल ने भारत पर मधेसी आंदोलन का समर्थन करने और वास्तविक नाकाबंदी की साजिश रचने का आरोप लगाया, जिससे द्विपक्षीय संबंध खराब हो गए। तनाव के बावजूद, मधेसी आंदोलन ने समावेशिता के मुद्दे को नेपाल की संवैधानिक राजनीति में सबसे आगे रखा।

इन चरणों के दौरान, मधेसी राजनीतिक दलों, जैसे कि एमजेएफ, तराई मधेस लोकतांत्रिक पार्टी (टीएमएलपी), और सद्भावना पार्टी, ने नागरिक समाज के लोगों के साथ मिलकर महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। हालाँकि, इन दलों के भीतर अक्सर होने वाले विभाजन और सत्ता संघर्ष ने अक्सर आंदोलन की एकता को कमजोर कर दिया। इन असफलताओं के बावजूद, मधेसी सक्रियता ने नेपाल में नागरिकता, संघवाद और जातीय पहचान पर चर्चा को नया रूप दिया।

लामबंदी के उपकरण और रणनीतियाँ

मधेसी आंदोलन सामाजिक और राजनीतिक लामबंदी की गतिशील और बहुस्तरीय रणनीतियों का उदाहरण है। सबसे परिभाषित पहलुओं में से एक जमीनी स्तर पर सक्रियता और स्थानीय नेतृत्व की भूमिका रही है। स्थानीय नेता न केवल पारंपरिक राजनीतिक संरचनाओं से बल्कि युवा समूहों, ट्रेड यूनियनों और छात्र संगठनों से भी उभरे हैं। इन अभिनेताओं ने रैलियों, जागरूकता अभियानों और गाँव और जिले के स्तर पर सार्वजनिक परामर्श आयोजित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई, जिससे आंदोलन सामुदायिक भागीदारी में गहराई से निहित हो गया[5]।

बाद के चरणों में लामबंदी का एक महत्वपूर्ण चालक मीडिया और डिजिटल प्लेटफॉर्म का प्रभावी उपयोग था। क्षेत्रीय एफएम रेडियो स्टेशनों से लेकर युवा कार्यकर्ताओं द्वारा फेसबुक और ट्विटर के व्यापक उपयोग तक, विरोध अपडेट प्रसारित करने से लेकर, डिजिटल उपकरणों ने कथाएँ बनाने, अंतर्राष्ट्रीय ध्यान आकर्षित करने और बिखरे हुए समर्थकों को एकजुट करने में मदद की। इन

प्लेटफार्मों ने मुख्यधारा के मीडिया द्वारा आंदोलन को भारत द्वारा प्रायोजित या राष्ट्र–विरोधी के रूप में चित्रित करने का भी मुकाबला किया।

एक अन्य प्रमुख रणनीति राष्ट्रीय राजनीतिक दलों और अंतर्राष्ट्रीय हितधारकों, विशेष रूप से भारत में, के साथ गठबंधन बनाना था। सीमा पार सांस्कृतिक और पारिवारिक संबंधों को देखते हुए, मधेसी नेताओं ने भारतीय राजनेताओं, खासकर बिहार जैसे सीमावर्ती राज्यों से सहानुभूति और समर्थन प्राप्त किया। भारतीय मीडिया ने भी मधेसी विरोध प्रदर्शनों को व्यापक रूप से कवर किया, जिससे उनकी मांगों को बढ़ावा मिला। इस गठबंधन ने उनके उद्देश्य को कूटनीतिक महत्व दिया, लेकिन इसने नेपाली सरकार पर विदेशी हस्तक्षेप के आरोप भी लगाए।

विरोध के प्रतीकवाद ने जनता की भावनाओं को एकजुट करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। राजनीतिक बयानों के रूप में धोती–कुर्ता जैसे सांस्कृतिक परिधानों के इस्तेमाल से लेकर मधेसी पहचान और बहिष्कार पर जोर देने वाले नारे लगाने तक, विरोध प्रदर्शन दृश्यमान और गूंजने वाली छवियों पर बहुत अधिक निर्भर थे[6]। बंद (शटडाउन), धरना, सड़क अवरोध और भूख हड़ताल सविनय अवज्ञा के सामान्य रूप बन गए। 2015 की नाकाबंदी, हालांकि विवादास्पद थी, नीति परिवर्तन की मांग के लिए रणनीतिक व्यवधान का उपयोग करने का सबसे प्रमुख उदाहरण थी।

भारत की भूमिका और सीमा पार सामाजिक जुड़ाव

मधेसी आंदोलनों में भारत की भूमिका सदियों से चली आ रही सीमा पार सांस्कृतिक, भाषाई और सामाजिक अंतर्संबंधों में गहराई से निहित है। नेपाल के तराई के मैदानों में रहने वाली मधेसी आबादी बिहार और उत्तर प्रदेश में भारतीय सीमा पार समुदायों के साथ एक मजबूत सांस्कृतिक संबंध साझा करती है। ये संबंध केवल प्रतीकात्मक नहीं हैं – वे मैथिली, भोजपुरी और अवधी जैसी साझा भाषाओं, छठ और होली जैसे आम त्योहारों और राष्ट्रीय सीमाओं से परे जाति–आधारित संबंधों में प्रकट होते हैं। इन संबंधों ने मधेसियों के बीच एक अनूठी अंतरराष्ट्रीय पहचान को बढ़ावा दिया है, जो उन्हें भारत–नेपाल लोगों के बीच संबंधों के केंद्र में रखता है।

दोनों देशों के बीच खुली सीमा नीति इन संबंधों को और मजबूत करती है। सीमा पार करने के लिए वीजा या पासपोर्ट की आवश्यकता नहीं होने के कारण, मधेसी अक्सर शिक्षा, रोजगार, व्यापार और विवाह के लिए देशों के बीच स्वतंत्र रूप से आते–जाते रहते हैं। इसने मजबूत अनौपचारिक नेटवर्क बनाए हैं – पारिवारिक, आर्थिक और सामाजिक – जो भारत को मधेसी लोगों के जीवन में एक महत्वपूर्ण हितधारक बनाते हैं। परिणामस्वरूप, मधेसी चिंताओं के साथ भारत का जुड़ाव इन संबंधों से प्रेरित है और क्षेत्रीय कूटनीति के लेंस के माध्यम से राजनीतिक रूप से व्याख्या की गई है[7]।

मधेसी मुद्दों पर भारत का नीतिगत रुख जटिल रहा है। आधिकारिक तौर पर, भारत ने तटस्थता की स्थिति बनाए रखी है, जिसमें कहा गया है कि मधेसी मुद्दा नेपाल का आंतरिक मामला है। हालांकि, महत्वपूर्ण क्षणों के दौरान – विशेष रूप से 2015–16 के संवैधानिक विरोधों में – भारत के कार्यों और बयानों को मधेसी मांगों के समर्थन के रूप में देखा गया। नेपाल के नए संविधान में समावेशिता की कमी और उसके बाद अनौपचारिक नाकाबंदी के बारे में भारतीय अधिकारियों द्वारा चिंता व्यक्त करने को काठमांडू में कई लोगों ने भारत के मधेसी हितों के साथ तालमेल के सबूत के रूप में देखा[8]। इससे नेपाल में व्यापक भारत विरोधी भावना पैदा हुई, बावजूद इसके कि भारत ने शांतिपूर्ण समाधान और बातचीत पर बार–बार जोर दिया।

भारतीय नागरिक समाज और मीडिया ने भी मधेसी आंदोलनों के इर्द–गिर्द सार्वजनिक आख्यानों को आकार देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। कई भारतीय समाचार पत्रों और समाचार चौनलों ने

मधेसी विरोधों को व्यापक रूप से कवर किया, अक्सर उन्हें अधिकारों और मान्यता के लिए एक वैध संघर्ष के रूप में चित्रित किया। सीमावर्ती कस्बों और पटना तथा दिल्ली जैसे प्रमुख शहरों में स्थित नागरिक समाज संगठनों ने मधेसी नेताओं और कार्यकर्ताओं के लिए मंच प्रदान किए हैं, एकजुटता अभियान आयोजित किए हैं, तथा मानवाधिकार उल्लंघनों के बारे में जागरूकता फैलाई है। इन अंतर्क्रियाओं ने भारतीय नागरिकों और मधेसी आंदोलन के बीच सामाजिक–राजनीतिक संबंध को और गहरा किया है[9]।

भारत और नेपाल को जोड़ने वाले अनौपचारिक नेटवर्क – विशेष रूप से तराई क्षेत्र में – को अतिरंजित नहीं किया जा सकता है। सीमा पार विवाह आम बात है, जिससे राजनीतिक सीमाओं से परे रिश्तेदारी दायित्व बनते हैं। स्थानीय व्यापार और रोजगार आपस में बहुत अधिक जुड़े हुए हैं, मधेसी अक्सर भारतीय सीमावर्ती कस्बों में छोटे व्यवसाय संचालित करते हैं या सीमा पार मौसमी काम की तलाश करते हैं। इन संबंधों ने न केवल मधेसी लामबंदी के समय भारत को एक स्वाभाविक सहयोगी बनाया है, बल्कि भारत की विदेश नीति को भी जटिल बना दिया है, जिससे उसे नेपाल की संप्रभुता का सम्मान करने और उन समुदायों की लोकतांत्रिक आकांक्षाओं का जवाब देने के बीच संतुलन बनाने के लिए मजबूर होना पड़ा है, जिनके साथ उसके सभ्यतागत संबंध हैं[10]।

भारत–नेपाल सामाजिक और राजनीतिक संबंधों पर प्रभाव

मधेसी आंदोलनों का भारत–नेपाल संबंधों की दिशा पर गहरा प्रभाव पड़ा है, जो अक्सर द्विपक्षीय संबंधों के स्वास्थ्य के लिए बैरोमीटर के रूप में कार्य करता है। सबसे महत्वपूर्ण परिणामों में से एक नेपाल के नए संविधान की घोषणा के बाद 2015–16 का कूटनीतिक गतिरोध था। जब मधेसियों ने संघीय पुनर्गठन प्रक्रिया से अपने बहिष्कार का विरोध किया, तो भारत ने राजनीतिक आम सहमति की कमी के बारे में चिंता व्यक्त की। प्रमुख सीमा चौकियों पर परिणामी नाकाबंदी को नेपाल में कई लोगों ने एक अनौपचारिक प्रतिबंध के रूप में व्याख्यायित किया, जिससे बड़े पैमाने पर भारत विरोधी प्रदर्शन हुए और भारत की भूमिका के बारे में लोगों की धारणा खराब हुई[11]।

यह चरण द्विपक्षीय कूटनीति में एक महत्वपूर्ण मोड़ था, जहां नेपाली राजनीति पर भारत के पारंपरिक प्रभाव की अधिक जांच की गई। नेपाली राजनीतिक अभिजात वर्ग ने भारत के कथित हस्तक्षेप को अपनी संप्रभुता के लिए चुनौती के रूप में देखा, जबकि मधेसी आबादी ने भारत को एक बाहरी आवाज के रूप में देखा जो उनकी मांगों को प्रतिध्वनित करती है। इस द्वंद्व ने एक कूटनीतिक विरोधाभास पैदा किया जहाँ भारत की बहुत ज्यादा करने और पर्याप्त न करने दोनों के लिए आलोचना की गई।

मधेसी आंदोलनों ने दोनों देशों में सार्वजनिक धारणाओं को भी बदल दिया। नेपाल में, आबादी के कुछ हिस्सों ने मधेसियों को "भारतीय एजेंट" के रूप में देखना शुरू कर दिया, जिससे नेपाली राष्ट्र के प्रति उनकी वफादारी पर सवाल उठने लगे। इससे जातीय राष्ट्रवादी बयानबाजी में वृद्धि हुई और पहाड़ी और मधेसी समुदायों के बीच विभाजन गहरा गया। इसके विपरीत, भारतीय सीमावर्ती क्षेत्रों में, मधेसियों की दुर्दशा को मानवाधिकार के मुद्दे के रूप में देखा गया, जिससे भारतीय नागरिकों में सहानुभूति पैदा हुई और सांस्कृतिक एकता की कहानी को बल मिला। इन परस्पर विरोधी धारणाओं ने घर्षण पैदा किया लेकिन भारत–नेपाल सामाजिक संबंधों की अंतरंग लेकिन अस्थिर प्रकृति की पुष्टि भी की[12]।

एक और महत्वपूर्ण प्रभाव सीमा पार प्रवास और पहचान की राजनीति पर पड़ा। मधेस में लगातार अशांति के कारण बेहतर अवसरों और सुरक्षा की तलाश में मधेसी युवाओं का भारत में प्रवास बढ़ गया। नेपाल और सीमा पार दोनों जगह मधेसी पहचान राजनीतिक रूप से अधिक जागरूक और मुखर हो गई। इससे एक अंतरराष्ट्रीय राजनीतिक पहचान का उदय हुआ है जो राष्ट्रीय नागरिकता और जातीय निष्ठा के बीच की रेखा को धुंधला कर देता है।

मधेसी आंदोलनों ने इस क्षेत्र में भारत की पारंपरिक विदेश नीति के सिद्धांत को चुनौती दी है, जिससे यह संप्रभु सम्मान और जातीय आत्मीयता के बीच एक नाजुक स्थिति में आ गया है। भारत को मधेसी मुद्दे को केवल एक कूटनीतिक परेशानी के रूप में नहीं बल्कि अपने तत्काल पड़ोस में चल रहे एक वैध लोकतांत्रिक संघर्ष के रूप में देखना चाहिए। हालांकि, प्रत्यक्ष भागीदारी से व्यापक नेपाली आबादी को अलग–थलग करने और दीर्घकालिक रणनीतिक हितों से समझौता करने का जोखिम है[13]। इसके विपरीत, निष्क्रियता को मधेसी परित्याग के रूप में देख सकते हैं, जो ऐतिहासिक रूप से मित्रवत आबादी के बीच भारत की सॉफ्ट पावर को कमजोर कर सकता है। एकजुटता और संप्रभुता के बीच इस तनाव ने भारत को बैकचैनल कूटनीति, विकास सहायता और सभी हितधारकों के साथ शांत जुड़ाव पर अधिक ध्यान केंद्रित करके अपने दृष्टिकोण को फिर से जांचने के लिए प्रेरित किया है। इस प्रकार मधेशी आंदोलन का दीर्घकालिक प्रभाव इस बात पर निर्भर करता है कि भारत अपने पड़ोसी कूटनीति को किस प्रकार पुनर्परिभाषित करता है – पितृसत्तात्मकता से साझेदारी की ओर स्थानांतरित होते हुए, इतिहास, जातीयता और लोगों के बीच संबंधों द्वारा निर्मित जमीनी हकीकतों के प्रति सजग रहते हुए[14]।

चुनौतियाँ आर आलोचना

मधेसी आंदोलनों के सामाजिक–राजनीतिक महत्व और ऐतिहासिक गहराई के बावजूद, वे गंभीर आलोचनाओं और आंतरिक विरोधाभासों से मुक्त नहीं रहे हैं। सबसे विवादास्पद मुद्दों में से एक विदेशी हस्तक्षेप के आरोपों के इर्द–गिर्द घूमता है, विशेष रूप से नेपाल के राजनीतिक प्रतिष्ठान और मीडिया के कुछ हिस्सों से जो मधेसी आंदोलन को भारत द्वारा संचालित या भारी रूप से प्रभावित बताते हैं। 2015 के संवैधानिक संकट और उसके बाद भारत–नेपाल सीमा पर नाकाबंदी के दौरान इस कथन को प्रमुखता मिली, जिसे व्यापक रूप से मधेसी मांगों के समर्थन में भारतीय प्रतिशोध के रूप में माना गया[15]। हालाँकि भारत ने आधिकारिक तौर पर किसी भी नाकाबंदी को लागू करने से इनकार किया, लेकिन प्रमुख चौकियों पर बड़े पैमाने पर व्यवधान की उपस्थिति और भारतीय अधिकारियों द्वारा दिए गए सार्वजनिक बयानों को कई लोगों ने सूक्ष्म कूटनीतिक दबाव के रूप में व्याख्यायित किया। इस धारणा ने नेपाल में राष्ट्रवादी बयानबाजी में उछाल और मधेसी कारणों के प्रति गहराते अविश्वास में योगदान दिया, जिसने इसे एक वैध आंतरिक सामाजिक आंदोलन के बजाय बाहरी रूप से संचालित बताया।

एक अन्य महत्वपूर्ण आंतरिक चुनौती मधेसी राजनीतिक नेतृत्व के विखंडन में निहित है। आंदोलन के शुरुआती चरणों में कुछ हद तक एकता देखी गई, लेकिन समय के साथ मधेसी–केंद्रित पार्टियों के प्रसार ने – जिनमें से प्रत्येक का अपना नेतृत्व, विचारधारा और गठबंधन है – आंदोलन की ताकत और सौदेबाजी की क्षमता को कमजोर कर दिया। मधेसी जनाधिकार फोरम (एमजेएफ) और तराई मधेस लोकतांत्रिक पार्टी (टीएमएलपी) जैसी प्रमुख पार्टियों के भीतर विभाजन ने गुटबाजी और प्रभाव के लिए प्रतिस्पर्धा को जन्म दिया, जिसने मधेसी मांगों की समग्र सुसंगतता को कमजोर कर दिया[16]। इस आंतरिक कलह ने न केवल केंद्र सरकार के साथ बातचीत को कमजोर किया, बल्कि

मधेसी आबादी के बीच भ्रम भी पैदा किया, जिससे राजनीतिक प्रतिनिधित्व में जनता का भरोसा कम हुआ।

मधेसी आंदोलन को आंतरिक बहिष्कार और समावेशिता की कमी के लिए भी आलोचना का सामना करना पड़ा है, खासकर महिलाओं, दलितों और जनजातियों के संबंध में। हालाँकि आंदोलन न्याय और समानता का आह्वान करता है, लेकिन इसका नेतृत्व काफी हद तक पुरुष–प्रधान और उच्च–जाति का रहा है, जिसमें मधेसी बेल्ट के भीतर हाशिए के समूहों का न्यूनतम प्रतिनिधित्व है[17]। दलित मधेसी और स्वदेशी थारू समुदाय अक्सर मुख्यधारा के मधेसी नेतृत्व पर पदानुक्रम को फिर से स्थापित करने का आरोप लगाते हैं, जबकि वे राज्य स्तर पर बहिष्कार का विरोध करते हैं। इसी तरह, राजनीतिक नेतृत्व और आंदोलन के लक्ष्यों की अभिव्यक्ति दोनों में महिलाओं की आवाजों का प्रतिनिधित्व कम रहा है, जिससे कथित मुक्ति एजेंडे के भीतर पितृसत्तात्मक मानदंडों को मजबूत किया जा रहा है। यह विरोधाभास आंदोलन की लोकतांत्रिक और परिवर्तनकारी क्षमता के बारे में सवाल उठाता है, खासकर जब यह अंतर–समुदाय असमानताओं को नजरअंदाज करता है[18]।

भविष्य की संभावनाएँ और अनुशंसाएँ

क्षेत्र में दीर्घकालिक शांति, स्थिरता और न्याय सुनिश्चित करने के लिए, भारत और नेपाल दोनों को शिक्षा, व्यापार और सांस्कृतिक आदान–प्रदान के माध्यम से सीमा पार सामुदायिक संबंधों को बढ़ावा देने के लिए सक्रिय रूप से प्रयास करने चाहिए। छात्र विनिमय कार्यक्रम, सांस्कृतिक उत्सव और संयुक्त कौशल विकास मंच जैसी पहल आपसी समझ को गहरा कर सकती हैं और पहचान आधारित ध्रुवीकरण को कम कर सकती हैं जो वर्तमान में मधेशियों के इर्द–गिर्द भारत–नेपाल के संवाद की विशेषता है। इस तरह की नरम कूटनीति लोगों के बीच संबंधों को फिर से जीवंत करने और राष्ट्रवाद की शून्य–योग धारणाओं से ध्यान हटाने में मदद कर सकती है[19]।

जातीय बहिष्कार और सीमावर्ती उपेक्षा के मुद्दों की मध्यस्थता में सार्क जैसे क्षेत्रीय संगठनों की भूमिका भी महत्वपूर्ण हो सकती है। हालाँकि सार्क की अक्सर इसकी सीमित प्रभावशीलता के लिए आलोचना की जाती है, फिर भी यह अल्पसंख्यक समुदायों और अंतरराष्ट्रीय पहचानों को चिंताओं को आवाज देने, सीमाओं के पार सहयोग करने और क्षेत्रीय विकासात्मक ढाँचों तक पहुँचने के लिए एक संभावित मंच प्रदान करता है। मानवाधिकार मंचों और सार्क के सामाजिक विकास एजेंडा में मधेसियों की शिकायतों को शामिल करने से संवाद को रचनात्मक और गैर–विरोधी तरीके से अंतर्राष्ट्रीय बनाया जा सकता है।

पहचान आधारित अशांति को भविष्य में बढ़ने से रोकने के लिए सीमा के दोनों ओर नीतिगत सुधार आवश्यक हैं। नेपाल के लिए, संवैधानिक प्रावधानों को ईमानदारी से लागू करने, आनुपातिक प्रतिनिधित्व सुनिश्चित करने और मधेस क्षेत्रों के भीतर समावेशी राजनीतिक नेतृत्व को प्रोत्साहित करने की तत्काल आवश्यकता है। तराई में बुनियादी ढांचे, शिक्षा और सार्वजनिक सेवाओं में निवेश से असंतोष की भौतिक जड़ों को भी संबोधित किया जा सकता है। भारत के लिए, एक अधिक संतुलित दृष्टिकोण की आवश्यकता है – ऐसा दृष्टिकोण जो हस्तक्षेप करने वाले के रूप में देखे बिना लोकतांत्रिक आंदोलनों का समर्थन करता हो। शांत कूटनीति, बैकचौनल संवाद और नेपाल भर में कई हितधारकों के साथ जुड़ाव – न केवल मधेस अभिजात वर्ग – भू–राजनीतिक आधिपत्य के बजाय विकास भागीदार के रूप में भारत की विश्वसनीयता को मजबूत करेगा[20]।

अंतर–मधेस एकजुटता और नेतृत्व जवाबदेही का निर्माण करने की आवश्यकता भी उतनी ही महत्वपूर्ण है। नागरिक समाज को राजनीतिक नेताओं पर दबाव डालना चाहिए कि वे पक्षपातपूर्ण लाभ पर

सामुदायिक कल्याण को प्राथमिकता दें और मधेस समाज के भीतर हाशिए पर पड़े उप–समूहों की आवाजों को शामिल करें। महिलाओं की भागीदारी बढ़ाना, दलित एजेंडों को एकीकृत करना तथा विविध तराई समुदायों के बीच एकता कायम करना, आंदोलन की वैधता और स्थायित्व को मजबूत करेगा।

निष्कर्ष

इस शोध ने सामाजिक सक्रियता, राजनीतिक दावे और अंतरराष्ट्रीय पहचान के गतिशील प्रतिच्छेदन के रूप में मधेसी आंदोलनों की आलोचनात्मक जांच की। मुख्य निष्कर्ष इस बात पर प्रकाश डालते हैं कि ऐतिहासिक बहिष्कार और क्षेत्रीय हाशिए पर रहने में निहित मधेसी संघर्ष, संघवाद, समावेश और मान्यता की निरंतर मांग में विकसित हुआ। आंदोलनों, विशेष रूप से 2007, 2008 और 2015–16 में, नेपाल के लोकतांत्रिक संक्रमण में पहचान, प्रतिनिधित्व और सीमावर्ती राजनीति के प्रणालीगत मुद्दों को सबसे आगे लाया।

इसके साथ ही, मधेसी कारण एक घरेलू चुनौती और एक कूटनीतिक फ्लैशपॉइंट दोनों के रूप में उभरा, जिसने भारत को एक जटिल भूमिका में डाल दिया – सांस्कृतिक आत्मीयता और राजनीतिक संप्रभुता के बीच फटा हुआ। अनौपचारिक नेटवर्क और आधिकारिक कूटनीति द्वारा आकार दिए गए भारत की प्रतिक्रिया ने मधेसी समुदाय के साथ अपने गहरे सामाजिक–राजनीतिक संबंधों को प्रतिबिंबित किया, जबकि हस्तक्षेप की आलोचना को भी आमंत्रित किया।

इस प्रकार मधेसी आंदोलन एक दोहरी पहचान का प्रतीक है। नेपाल के भीतर न्याय के लिए एक जमीनी अभियान, और भारत–नेपाल संबंधों को प्रभावित करने वाली एक क्षेत्रीय चिंता। जैसे–जैसे दोनों देश बढ़ते राष्ट्रवाद और क्षेत्रीय कूटनीति से निपटते हैं, स्थायी शांति समावेशी शासन, अंतर–समुदाय एकता और संवेदनशील सीमा पार सहयोग पर निर्भर करेगी। आगे बढ़ते हुए, इस जटिल सीमा क्षेत्र में सक्रियता और कूटनीति को संतुलित करना तराई में समानता, सम्मान और स्थिरता सुनिश्चित करने के लिए महत्वपूर्ण होगा।

संदर्भ सूचीः

[1] झा, पी., 2014, बैटल्स ऑफ द न्यू रिपब्लिकः ए कंटेम्परारी हिस्ट्री ऑफ नेपाल, हर्स्ट पब्लिशर्स, लंदन, पृष्ठ 1–32

[2] लवोटी, एम., 2005, टुवर्ड्स ए डेमोक्रेटिक नेपालः इनक्लूसिव पॉलिटिकल इंस्टिट्यूशंस फॉर अ मल्टीकल्चरल सोसाइटी, सेज पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, पृष्ठ 14–45

[3] थापा, डी., 2015, द मेकिंग ऑफ द मधेशी मूवमेंट, साउथ एशिया जर्नल, खंड 10, अंक 1, पृष्ठ 33–45

[4] हाछेथु, क., 2007, मधेशी नेशनलिज्म एंड रिस्ट्रक्चरिंग द नेपाली स्टेट, सीएनएएस जर्नल, त्रिभुवन विश्वविद्यालय, काठमांडू, पृष्ठ 12–27

[5] शाह, एस., 2013, सिविल सोसाइटी इन अनसिविल प्लेसेसः सॉफ्ट स्टेट एंड रेजीम चेंज इन नेपाल, ईस्ट–वेस्ट सेंटर, वॉशिंगटन डी.सी., पृष्ठ 17–99

[6] सुवेदी, डी. बी., 2014, सिविल रेसिस्टेंस एंड डेमोक्रेटाइजेशनः द केस ऑफ नेपाल्स पीपल्स मूवमेंट, पीस रिव्यू, खंड 26, अंक 1, पृष्ठ 34–42

[7] गेलनर, डी. एन., 2007, रेसिस्टेंस एंड द स्टेटः नेपालिज एक्सपीरियंसेस, सोशल एनालिसिस, खंड 51, अंक 1, पृष्ठ 157–172

[8] बराल, एल. आर., 2012, नेपालदृभारत संबंधः समस्याएं और संभावनाएं, इंस्टीट्यूट ऑफ फॉरेन अफेयर्स, काठमांडू, पृष्ठ 1–15

[9] चौधरी, ए., 2016, इंडिया एंड नेपालः रिविजिटिंग द 1950 ट्रीटी, ऑब्जर्वर रिसर्च फाउंडेशन, अभिगमन अप्रैल 2025

[10] भट्टराई, बी., 2016, पॉलिटिकल ट्रांजिशन एंड पीसबिल्डिंग इन नेपाल, स्ट्रैटेजिक एनालिसिस, खंड 40, अंक 1, पृष्ठ 58–71

[11] शर्मा, जे., 2018, डायस्पोरा एंड कॉन्फ्लिक्टः द मधेशी मूवमेंट इन नेपाल, इन आइडेंटिटी, माइग्रेशन एंड द न्यू सिक्योरिटी एजेंडा इन यूरोप, पलग्रेव मैकमिलन, लंदन, पृष्ठ 109–126

[12] अहमद, एस., 2014, द कल्चरल पॉलिटिक्स ऑफ इमोशन, रूटलेज, न्यू यॉर्क, द्वितीय संस्करण, पृष्ठ 15–28

[13] स्पिवाक, जी. सी., 1988, कैन द सबऑल्टर्न स्पीक?, इन नेल्सन, सी., – ग्रॉसबर्ग, एल. (सम्पा.), मार्क्सिज्म एंड द इंटरप्रिटेशन ऑफ कल्चर, यूनिवर्सिटी ऑफ इलिनॉय प्रेस, शिकागो, पृष्ठ 271–313

[14] हॉल, एस., 1996, इंट्रोडक्शनः हू नीड्स 'आइडेंटिटी'?, इन हॉल, एस., – डु गे, पी. (सम्पा.), क्वेश्चन्स ऑफ कल्चरल आइडेंटिटी, सेज पब्लिकेशन्स, लंदन, पृष्ठ 1–17

[15] मिश्रा, च., 2010, मधेशी नेशनलिज्म एंड द राइज ऑफ एथनिक पॉलिटिक्स इन नेपाल, इकनॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली, खंड 45, अंक 9, पृष्ठ 21–24

[16] व्हेल्प्टन, जे., 2005, ए हिस्ट्री ऑफ नेपाल, कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, कैम्ब्रिज, पृष्ठ 12–22

[17] सिजापति, बी., – लिम्बु, ए., 2012, माइग्रेशन ऑफ हेल्थ वर्कर्स फ्रॉम नेपाल, अंतर्राष्ट्रीय प्रवासन संगठन (IOM), काठमांडू, अभिगमन अप्रैल 2025

[18] पांडे, एन., 2011, न्यू कोर्स फॉर इंडियादृनेपाल रिलेशन्स, इंस्टीट्यूट ऑफ पीस एंड कॉन्फ्लिक्ट स्टडीज, नई दिल्ली, पृष्ठ 5–78

[19] उप्रेती, बी. आर., 2006, आर्म्ड कॉन्फ्लिक्ट एंड पीस प्रोसेस इन नेपालः द माओवादी इन्सर्जेंसी, पास्ट नेगोशिएशंस एंड अपॉर्च्यूनिटीज फॉर कॉन्फ्लिक्ट ट्रांसफॉर्मेशन, अड्रॉइट पब्लिशर्स, नई दिल्ली, पृष्ठ 23–176

[20] गौतम, पी., बंस्कोटा, पी., – मंचंदा, र., 2001, व्हेयर देयर आर नो मेनः वीमेन इन द माओवादी इन्सर्जेंसी इन नेपाल, इन मंचंदा, र. (सम्पा.), वीमेन, वॉर एंड पीस इन साउथ एशिया, सेज पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, पृष्ठ 214–242